रक्त-चंदन

[गांधीजी की पुण्यस्मृति में]

नरेन्द्र शर्मा

ग्रंथ-संख्या—१३७
प्रकाशक तथा विक्रेता
भारती-भण्डार
लीडर प्रेस, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण
सं० २००६ वि०
मूल्य ३)

मुद्रक
महादेव एन० जोशी
लीडर प्रेस, इलाहाबाद

निवेदन

मकर-संक्रान्ति के बाद, कृष्णपक्ष की प्रतिपदा की सांझ थी। मैं डेकनक्वीन नाम की रेलगाड़ी से पूना पहुँच रहा था। पूना स्टेशन से पूर्व की ओर प्रतिपदा का आरक्त चंद्रमा उदित हो रहा था, जैसे वह रक्त में डूब कर, उबर कर, आकाशपथ पर अग्रसर हो। और पांचवें दिन, उसी पक्ष की पंचमी की सांझ को गांधीजी का वध हुआ। भारत का शान्ति-चंद्र शोणित में डूब गया।

लाखों देशवासियों के समान मैं भी चेतनाहत और किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। सोचा, देशव्यापी रक्तपात में भारतीय समाज निश्चय डूब जायगा, किन्तु तपस्वी का बलिदान कभी निष्फल नहीं जाता।

वह रक्त नहीं, रक्त चंदन था, जिससे गांधीजी हमारे स्वातंत्र्य-प्रभात को सींच गए हैं।

उनका निधन न जाने कितने युगों तक, कितनी काव्य-कृतियों के लिए प्रेरणा-स्रोत बना रहेगा। उनका जीवन तो अनगिनती महाकाव्यों का विषय

बनेगा ही। तो भविष्य के गर्भ को गुञ्जित करने वाले उस गांधी-काव्य के बीच प्रस्तुत रचना का मूल्य ही क्या है? फिर भी मैं इस छोटे-से संग्रह को प्रकाशित कर रहा हूँ।

जलधर से सृजनजल बरसता है। पोषित होकर पल्लव-मंजरी और फल-फूल वाले विटप और वल्लरियां विकास पाते हैं। साथ ही घास-फूंस और कांस-बांस को भी जीवन मिलता है।

गांधीजी आज होते तो ८१वें वर्ष में पदार्पण करते, किन्तु होना कुछ और ही था। अस्थिशेष हमारे दधीचि राष्ट्रनायक को भस्मशेष बन कर अन्त में अशेष होना था।

यशःकाय बापू की तपोपूत देह में बहने वाले रक्त-चंदन ने इस क्षेत्र को भी सींचा है। और घास-फूंस और कांस-बांस की यह नन्हीं-सी क्यारी आपके सामने है।

नरेन्द्र शर्मा

पूना,
२-१०-१९४८

विषय-सूची

	विषय				पृष्ठ
(१)	गांधीजी	...	...	...	११
(२)	अहिंसा क्रान्ति	...	...	...	१३
(३)	जिन्ना और गांधी	...	...	...	१५
(४)	सार्थवाह बापू	...	...	...	१७
(५)	जनधन बापू	...	...	...	१९
(६)	महात्मा गांधी	...	...	...	२५
(७)	गयें महात्मन्	...	...	...	२६
(८)	सावधान !	...	...	...	२८
(९)	हत्यारा	...	...	...	३१
(१०)	दिल्ली	...	...	...	३४
(११)	महात्म-हनन	...	...	...	३५
(१२)	देवालय	...	...	...	३६
(१३)	दिव्यात्मा	...	...	...	३८
(१४)	रक्त-चंदन	...	...	...	४०
(१५)	कवि महात्मा	...	...	...	४१
(१६)	राष्ट्र-हनन	...	...	...	४२
(१७)	हम	...	...	...	४४

	विषय	पृष्ठ
(१८)	दीन-हीन	४५
(१९)	श्रद्धा-कमल	४७
(२०)	देन	४९
(२१)	हेतु	५०
(२२)	कबीर-वाणी	५१
(२३)	खंड-संयुक्त	५२
(२४)	गीता	५३
(२५)	नंगा फकीर	५४
(२६)	राम	५५
(२७)	उपकार	५६
(२८)	अस्थि-विसर्जन	५७
(२९)	निश्चित !	५८
(३०)	प्रत्यक्ष	५९
(३१)	स्वर्ण-चित्र	६१
(३२)	केवल तुम	६२
(३३)	मुक्ति	६३
(३४)	आदि-अंत	६४
(३५)	मानव तुम !	६५
(३६)	सम्प्रति संदेश	६६
(३७)	अलिखित गीत	६७
(३८)	मानव के प्रति	६८
(३९)	सीख	७१
(४०)	सूर्य अस्तमित	७२

	विषय				पृष्ठ
(४१)	आजाद हुए !	...	...	...	७३
(४२)	क्यों ?	...	...	...	७४
(४३)	शान्ति-चंद्र	...	...	...	७५
(४४)	शिरस्त्राण	...	...	...	७६
(४५)	पुष्पक विमान	...	...	...	७७

समर्पण

जिसकी उम्र अभी दस महीने की है,
उस नन्ही तेजल और
उसके समवयस्क
अन्य शिशुओं को,
जो केवल पढ़ और सुन कर ही
गांधी जी को देख सकेंगे।

बम्बई

३०-१-१९४९

गांधी जी

जनहित के लिए, देव, तुमने
क्या नहीं सहा ? क्या नहीं किया ?

श्री-सम्पति, सुख, परिवार-मान
की कौन कहे ?
अरमानों के, निज प्राणों के भी
मुक्त-दान की कौन कहे ?
प्रियतमा संगिनी नारी का
तुमने जनहित बलिदान दिया :

जिन आदर्शों-सिद्धान्तों के
तुम अटल अचल;
(इस अटल अचल को हिला न पाई
अहंकार की मति चञ्चल !),
उन आदर्शों-सिद्धान्तों का
तुमने जनहित अपमान किया !

तुम अमृत सत्य के अभिलाषी
निर्भीक संत;

पर मर्त्यलोक-कल्याण-हेतु
चिर आशंकित ममता अनन्त !
जनहित के लिए असत्यों से की संधि
शम्भु, विषपान किया !

सौ बार हार कर, सेनानी,
तुम अपराजित !
जय और पराजय के सुख दुख से
नहीं युद्ध की गति शासित !
क्या इसीलिए मृदु पल्लव का लोहा
वज्रों ने मान लिया ?

जन हित के लिए, देव, तुमने
क्या नहीं सहा ? क्या नहीं किया ?

बम्बई ९-८-१९४४

अहिंसा-क्रान्ति

क्रान्ति यों जग में हुईं अब तक कई,
पर अहिंसा-क्रान्ति की संज्ञा नई,
शैली नई!
साध्य साधक और साधन में न हो
व्यवधान जब,
क्रान्ति तब मगलमय, करुणामयी!

अहिंसा जिनके लिए रणचातुरी,
वह नहीं समझे अहिंसा ही
प्रगति-रथ की धुरी!
है न यदि अद्वैत में विश्वास,
आत्मा की अमरता स्यात् है,
तो अहिंसा भी दुराग्रह आसुरी!

अचिर होगी विजय भारतवर्ष की,
क्षणिक होगी यह तुमुल-ध्वनि
हर्ष की, उत्कर्ष की!
यदि अहिंसा सबल के प्रति और
हिंसा निबल से,
हार होगी वह अहिंसादर्श की!

राष्ट्रसेवी कल बनें सुलतान कल,
तो हमारी राष्ट्रकुल-लक्ष्मी नहीं
होगी अचल!
यदि अहिंसा रीति थी, या दीनता
की देन थी,
तो न सत्याग्रह हुआ जग में सफल!

आज उन्नति, कल पतन, निश्चित नहीं!
पर अहिंसा मनुज के मन में अभी
समुचित नहीं!
रही प्रभुता की पिपासा और
सत्ता स्वार्थ की,
तो अनर्थों की अभी भी इति नहीं!

बम्बई — २५-९-१९४६

जिन्ना और गांधी

एक ओर उन्माद, दूसरी ओर
सहज संवेदन!
अहंकार-हुंकार वहाँ, है यहाँ
विनम्र निवेदन!
वहाँ जनून और क़ानूनी बहस
अदालत वाली,
यहाँ सवज्ञा सत्याग्रह, जनजीवन-जनित
प्रणाली!
एक ओर है व्यक्तिवाद, उच्छिष्ट
विगत योरप का,
इधर विश्वकल्याणवाद, जो चरम लक्ष्य
है तप का!
कर खंड खंड मानवता को, वह
ग्रास बनाता जन को;
यह न्योछावर कर चुका दीन जनता पर
तन मन धन को!
दर्पमूल तानाशाही है वहाँ,
नीति-कौशल है;

यहाँ अहिंसा प्रेममूल है, सेवा
का संबल है!
यह बनिया है, यह दहकां है
पर है हिन्दुस्तानी;
वह न मुसलमा और न हिन्दू, है
वकील लासानी!
वह इसके हित बने चुनौती, है यह
नियति प्रयोजन!
क्या न दुराग्रह को जीतेगा, सत्याग्रही
समर्पण?

बम्बई २८-११-१९४६

सार्थवाह बापू

चलने वाले पीछे छूटे,
गहराया पथ में तम अथाह,
पर मुड़ कर मत पीछे देखो,
हे महाजाति के सार्थवाह!

हम कोटि कोटि-सामान्य कोटि
कण भर, क्षण भर के लिए व्यग्र;
तुम व्यापक-वेधक-दृष्टि-युक्त
दिशि-काल देखते हो समग्र

हम बूंद मात्र के हेतु तृषित,
तुम सतत त्रिपथगा के प्रवाह!

हम स्वार्थबद्ध संकुचित-बुद्धि,
तुम महामना मानव-महिमा!
हम रेंग रहे पृथ्वीतल पर,
तुम व्योम बीच भू की गरिमा!
तुम ज्योतिशिखा जग-जीवन की
हम मानवता के हृदय-दाह!

हम केवल अपने हित जीवित,
जीवन-क्रम केवल क्रय-विक्रय,

उल्लासमूल आनन्दपद्म को
        निगल रहा कर्दम निर्दय !
ध्रुव-दीप बनो मानवता के
        खाये जाती भयभरी राह !

हम भूल रहे हैं पग पग पर
        दोहराओ तुम——सहयोग, प्रेम !
लिखते जाओ पदचिह्नों से
        कर्तव्य, त्याग, बलिदान-नेम !
बटमार बनें वाल्मीकि आज
        तुम राम-नाम के बनो साह !

बम्बई   सितम्बर १०, १९४७

जनधन बापू

पद्मनयन न्योछावर,
कोटि कोटि माथ प्रणत !
अगणित उर मुक्त द्वार,
स्वागत, जनधन, स्वागत !

जड़ता का चीर तिमिर,
विकसित कर किरण-कुसुम,
सदियों की रूढ़ि तोड़,
लाये हो नवयुग तुम,
अकथ अथक महाबाहु
अविरत परमार्थ-निरत !
सक्रिय तुम वर्तमान,
सार्थक जिससे अतीत !
भावी जिस पर विमुग्ध
मानवदेही पुनीत
भूतल पर चरणचिह्न—
ज्योतिर्सरि नभ-निर्गत !

१

सदियों तक जन दरिद्र
क्षुब्ध रहे और क्षुद्र,
किन्तु आज उमड़ा है
तुम में जन-मन-समुद्र !
जन-सेवक जन-शासक,
जन का मत जिसका मत !
जनप्रिय हो, किन्तु न तुम
जनता के चाटुकार !
प्रेमी हो, निर्मम भी—
त्रुटियों को खड्गधार !
त्यागो ब्रह्माण्ड, किन्तु
त्याग नहीं सकते सत !

३

हिंसा है अभी अमित
मानव भी अस्थिरचित,
अहम्मन्य प्राणी है,
स्वार्थबुद्धि-अनुशासित !

जन का मन कुरुक्षेत्र,
जगतीतल पानीपत !

५

क्या न हुई पूर्ण अभी
जन की दुख-ताप-भुक्ति ?
तुम मे सामान्य मनुज
खोज रहा शाप-मुक्ति !
होगा कव स्वर्ग सुलभ
पृथ्वी के अन्तर्गत ?

वनना है मानव को
देवो का अभिभावक !
देख कभी रज का कन
हो सुमेरु नतमस्तक !
धर्मो का मर्म गूढ
युग युग क्यो रहा स्वगत ?

६

झंझायें मंत्रमुग्ध,
ज्वालायें हुईं शान्त !

जन का मन कुरुक्षेत्र,
जगतीतल पानीपत !

५

क्या न हुई पूर्ण अभी
जन की दुख-ताप-भुक्ति ?
तुम में सामान्य मनुज
खोज रहा शाप-मुक्ति !
होगा कब स्वर्ग सुलभ
पृथ्वी के अन्तर्गत ?

बनना है मानव को
देवों का अभिभावक !
देख कभी रज का कन
हो सुमेरु नतमस्तक !
धर्मों का मर्म गूढ
युग युग क्यों रहा स्वगत ?

६

झंझायें मंत्रमुग्ध,
ज्वालायें हुईं शान्त !

युग-युग तक, रहो देव,
जन-मन में करो वास
देशों का नहीं, अखिल
जगती का हरो त्रा।
मिट्टी हो आभामय,
ममता मद-मोह-वि

बम्बई

महात्मा गांधी

तुम शुद्ध बुद्ध अन्तर्मन हो जनता के,
अन्तर्लोचन चिर-धावित मानवता के!

तुम प्रकृत-पुत्र भारत की वसुन्धरा के,
संस्कृत-स्वरूप प्राकृतजन परम्परा के,
बीजाक्षरवत् भूदेवी निरक्षरा के—
दीपित प्रतीक तुम निर्धन वेदव्रता के!

तुम अतल सत्य-जल-कूप युगों के मरु में,
फल अमरवल्लरीग्रस्त राष्ट्र के तरु में,
विश्वास-सार-सौरभ दिक्काल-अगरु में,
प्रद्योत गस्य तुम मूर्छित पार्थिवता के!

ग्रह-गोलक-सा जन-पिंड तप्त भ्रमता नित,
ले रहे जन्म शशि-अङ्गारक युग-भावित;
तुम इस युग के चिदशक्ति-पिंड अपराजित
सित शीर्ष-पुष्प भारत की कीर्तिलता के!

म्वई

दिसम्वर २२, ४७

युग-युग तक, रहो देव,
जन-मन में करो वास !
देशों का नहीं, अखिल
जगती का हरो त्रास !
मिट्टी हो आभामय,
ममता मद-मोह-विरत !

बम्बई सितम्बर ११-१९४७

महात्मा गांधी

तुम शुद्ध बुद्ध अन्तर्मन हो जनता के,
अन्तर्लोचन चिर-धावित मानवता के!

तुम प्रकृत-पुत्र भारत की वसुन्धरा के,
संस्कृत-स्वरूप प्राकृतजन परम्परा के,
बीजाक्षरवत् भूदेवी निरक्षरा के—
दीपित प्रतीक तुम निर्धन वेदव्रता के!

तुम अतल सत्य-जल-कूप युगों के मरु में,
फल अमरवल्लरीग्रस्त राष्ट्र के तरु में,
विश्वास-सार-सौरभ दिक्काल-अगरु में,
प्रद्योत गस्य तुम मूर्छित पार्थिवता के!

ग्रह-गोलक-सा जन-पिंड तप्त भ्रमता नित,
ले रहे जन्म शशि-अङ्गारक युग-भावित;
तुम इस युग के चिदशक्ति-पिंड अपराजित
सित शीर्ष-पुष्प भारत की कीर्तिलता के!

म्बई दिसम्बर २२, ४७

गये महात्मन् !

गये महात्मन्, अल्पबुद्धि के
आघातों को सह कर,
हतचेतन हम समझ न पाये
परमात्मन् की माया !
हेतु और कारण क्या थे
उस आस्तिक की हत्या के ?
परमभागवत ने यों तुच्छ करों से
शिव-पद पाया !

क्षमा करो, प्रभु, नव भारत को,
भारत है हत्यारा !
रक्तस्नात हो जली यहां
उस महापुरुष की काया !
वेद शास्त्र उपनिषद पुराणों
की भू ग्लानि-मग्न है,
कृपा-प्रवण हो भारत पर
यों अन्तरिक्ष की छाया !

हमने कभी न पहचाना
बापू की गुरु गरिमा को,
केवल यह जाना है
कैसा था बापू का जाना!
रहना अब न यहां भारत में
वरदहस्त नेता का—
हवा और पानी, सूरज औ धरती
का छिन जाना!

अग्निहंस उड़ गया, चिता
बुझ गई अगरु चंदन की,
भस्म हो चुकी भस्मकाम
काया भी राष्ट्रपिता की,
अब न देहगत आत्मा उनकी
अब न कंठगत वाणी,
रही न सीमित ज्योतिर्पिंड में
द्युति भारत-सविता की!

बम्बई
जनवरी ३१, १९४८

सावधान !

क्षत-विक्षत होनी थी क्यों यों
तपोपूत वह काया ?
क्यों करुणार्द्र अजातशत्रु का
शोणित गया बहाया ?
सन्ध्या थी, प्रार्थना सभा थी,
थे करबद्ध महात्मन्,
किस हिन्दू ने पुरुषोत्तम
हिन्दू पर हाथ उठाया ?
लक्ष्मीनारायण उनके हित
थे दरिद्रनारायण,
वेद-शास्त्र वचकर्ममनोगत,
थे न मात्र पारायण !
जटिल संकुचित गूढ ग्रंथि में
थी न चेतना बंदी,
मंदिर और कन्दराओं में
छिपे न वह करुणायन
जहां दुःख अन्याय अविद्या,
गये वहां करुणाकर—

विनय शील निर्भीक साधना
सत्याग्रह के पथ पर!
भारत का गजराज उबारा
युग युग के संकट से,
क्या क्या नहीं किया बापू ने
धारण कर तन नश्वर?

चाट गईं लपटें सब को,
सूखा न एक प्रेमाशय!
खंड खंड था देश, किन्तु
वह रहा अखंड शिवालय!
केवल वही विशाल हृदय था
तजा न जिसने सब को,
जो चालीस कोटि बच्चों को छोड़,
गया न हिमालय!

स्वयम् हिमालय फिरा भटकता
दर दर भारत भर में,
चाह मोक्ष की भी न कर सकी
घर, जिसके अंतर में!
मेरी और तुम्हारी सेवा,
यही धर्म था उसका;

युगदुर्लभ ऐसे बापू को
गंवा दिया क्षण भर में !

शुभ्र शुद्ध ज्योत्स्ना-सी खादी
ढांके थी कृश तन को
कोटि कोटि जन की हितचिन्ता
भरे हुए थी मन को,
हंसता तेजोमय मुखमंडल
वक्षस्थल पुरुषा का,
सहसा हिन्दू हत्यारे ने
छीन लिया जनधन को !
यह नूतन हिन्दुत्व ! चेत,
हिन्दू, ऐसे हिन्दू से !
वयोवृद्ध प्रिय राष्ट्रपिता के
हत्यारे की वू से !
हत्यारा तेरे ही घर में,
छीनेगा आज़ादी ;
उपजी है आज़ादी तेरी
बापू जी के खूं से !

बम्बई

हत्यारा

वयोवृद्ध बापू की हत्या
घटना यह सामान्य नही है!
यह कैसा हिन्दुत्व, किया पैदा
जिसने उनका हत्यारा?
चिन्तातुर हो पूछ रहा है
भावी लोकतंत्र भारत का;
मौन निरुत्तर विलख रहा है
आहत अन्तःकरण हमारा!

सोमनाथ औ विश्वनाथ को
बचा सका क्या यह हिन्दूपन?
विजयनगर को और वंग की
वीरभूमि को खो न दिया क्या?
क्या न पेशवाई के मद ने
पानीपत में मांगा पानी?
सरदारों ने सत्तावन में
पक्ष शत्रु का नही लिया क्या?

क्या कारण थे अधःपतन के
आओ चर्चा करें विचारें;

हिन्दू का व्यवहार क्षुद्र था,
दर्शन कितना ही महान हो!
छूतछात थी जात-घात थी
आत्मबोध कुलधर्म मात्र था!
था समाज में न्याय न वाक़ी,
चाहे जितना शास्त्र-ज्ञान हो!

दो पंडित थे, कोटि निरक्षर
शास्त्र बन गये मात्र जीविका,
साधक जा बैठा कोने में
मठ में मठाधीश पाखंडी,
राजे-रजवाड़े गुलाम थे,
व्यभिचारी, अतिचारी, व्यसनी;
शत्रु नहीं बकरे खाती थी
राज फिरंगी में मां चंडी!

ग्लानि-मग्न भारत के त्राता
आये तब जन-शरण महान्मन्
हरिजन बने, किसान बने,
श्रमजीवी बने राष्ट्र के नायक
तोड़ फोड़ पाखंड सत्य से
हरा दिया अन्याय विनय से

दिल्ली

नभ तिरंग चक्रध्वज रंजित .
इन्द्रप्रस्थ अपनी रजधानी,
वृद्ध पितामह मृत्युञ्जय के
वध की है जो अमिट निशानी !
राष्ट्रपिता की गौरव-गाथा,
बच्चों के पापों की पोथी
हिन्दू कभी न भूल सकेंगे—
दिल्ली एक कलंक-कहानी !

बम्बई ३-२-१९४८

महात्महनन

भारत की मूढ़ावस्था ने
करवट बदली आज,
गिरी महात्महनन से सहसा
हिन्द देश पर गाज!
दुष्ट दुराग्रह के, मूर्खों
प्रतिहिंसा के आघात—
हिला गए जनता को
जैसे शिशिर-वात तरु-पात!
कौन हरे अब दलितों के दुख
कौन जिये परकाज?
कौन जटिल को सरल करेगा,
विरले को सामान्य?
पदमर्दित को आश्रय देकर
कौन बनाये मान्य?
यह नैतिक दुष्काल सहेगा
कब तक मनुज-समाज?

बम्बई
८-२-१९४८

देवालय

देवालय थी देह, शिवालय
हत्यारे ने ढाया !
सोचा था क्या कभी
छुएगी उसे मृत्यु की छाया ?
परसेवा हित पली, बनी
जो परसेवा-में आहुति,
क्या वह रक्त-मांस की ही थी
हाड़-चाम की काया ?

अरुण ज्योति के बूंद-बीज
जो झरे तपोधन तन से
वह न व्यर्थ जायेंगे,
तप के सूर्य उगें कन कन से !
मानवता की रक्षा के हित
गिरे जहां पर बापू,
नइ सभ्यता के सुमेरु
उट्ठेंगे उस आंगन से !

भस्म कर सका कौन सूर्य को,
कौन डुबाये जल को ?
है अगाध वारिधि प्रेमात्मा,
पाटे कौन अतल को ?

सत्य सदा अपराजित,
        नभ में उगते उजले तारे,
आघातों से डिगा सका है
        कौन सहिष्णु अचल को?

राम नाम पुण्यात्माओं का,
        अन्त समय का धन है
ब्रह्मज्ञान का यह प्रतीक
        ऐसा अनमोल रतन है,
दस्यु न कोई छीन सका है
        जिसे भक्त के मन से;
नष्ट-भ्रष्ट होता न शस्त्र से
        रामभक्त का तन है!

मिले तत्व में तत्व, तत्व
        जाता न किसी में छाया!
छू न सकी है कभी
        यशोधन के तन को तम-छाया!
परसेवा-हित रही, हुई
        जो परसेवा में अर्पित,
थी क्या वह भी रक्त-मांस की
        हाड़-चाम की काया?

बम्बई ४-२-१९४८

दिव्यात्मा

कहा—राम, हे राम, और फिर
श्रीमुख कभी न खोला !
फेंक दिया है दिव्यात्मा ने
मिट्टी का तन-चोला !

नमस्कार चालीस कोटि को
किये रहे कर बांधे,
डिगे न तिल भर सेवापथ से
'सत्याग्रह-व्रत साधे !'
मृत्युदूत ने मृत्युञ्जय से
क्यों नाहक बल तोला ?

रही जनार्दन जन की मूरत
मन के सिंहासन पर !
खंडित कौन कर सका प्रतिमा,
भारत का खंडन कर ?
नगपति डोले, किन्तु न डोला
मंदिर हृदय-हिंडोला !

मुक्ति न चाही, और न चाही
जागरिता कुंडलिनी,
मानस में विकसानी चाही
मानव-जात्रि-कमलिनी !
जिस पर कोटि नयन न्योछावर,
उस पर गोली-गोला ?

बम्बई ५-२-१९४८

रक्त चंदन

वह रक्त नहीं था, देव,
रक्त चंदन था!
तनु-पात नहीं था,
मातृभूमि-वंदन था!

साञ्जलि सप्रेम कर जोड़, राम कह
कर प्रणाम, मृत्युञ्जय—
तुम गए त्याग तन नाशवान,
पा गये अमरपद निश्चय!
वह मरण नहीं, नव भव का
अभिनन्दन था!
वह रक्त नहीं था, देव,
रक्त चंदन था!

मर्त्यों के हित निर्माण किया
जीवन-पथ जीवन तज कर,
जगती में वैभव कुछ न लिया,
नित दिया पुण्य हरि भज कर!
जो अंश अग्नि को दिया,
तप्त कंचन था!
वह रक्त नहीं था, देव,
रक्त चंदन था!

बम्बई ५-२-१९४८

कवि महात्मा

वह अलभ सहज सात्विक जीवन,
लहराती थी जिसमें क्षण क्षण
कविता की विष्णुपदी पावन,
जीवित कविता संजीवनधन!

थी विष्णुपदी वह सूक्ष्मधार
छू सके न शब्दों के कगार!
था सत्य शिरोमणि अलंकार,
जड़ रूप-प्रकार न थे भावन!

देखा स्वदेश का विद्यायन,
भूखा वंदी वैशम्पायन!
कैमठ कविउर कम्पन कम्पन
खोले बहिरन्तर के बंधन!

यों सत्याग्रह का मार्ग लिया,
वैशम्पायन को मुक्त किया,
कविता को नूतन अर्थ दिया,
लिख चरण चरण पर नये चरण!

बम्बई

राष्ट्रहनन

थी घातक घोर अवज्ञा
जन के मन में,
चहुँ दिशि प्रमाद का राज्य
राष्ट्रजीवन में!
था दूर दूर तक तिमिर-पूर
हिल्लोलित,
बस ज्योति शेष थी वृद्ध
देश-पूषण में!

क्यों बना महात्मा नहीं
दुरात्मा दुर्जन?
यह ठेस लगी, वह रहा
आज भी सज्जन!
दीखी न भली आर्यों की
नीति सनातन,
दूषण ही दीखे हमें
मनुज-भूषण में!

विक्षिप्तों को ज्यों, खलता है
चंद्रातप,
ज्यों मत्त द्विरद को शत्रु
दीखते पादप,
अतिचारी को ज्यों रुचिकर
नहीं त्याग-तप,
सुख मिला, हाय, हमको
भी राष्ट्रहनन में

बम्बई ५-२-१९४८

हम

हम अल्पबुद्धि हैं,
अश्रद्धालु प्राणी हैं।
जो पद-तल, वह विक्षोभ-ग्रस्त
जो पद पर, अभिमानी है!
हम अल्पबुद्धि हैं,
अश्रद्धालु प्राणी हैं
थे शत्रु तुम्हारे बहुत,
किन्तु मित्रो ने तुमको मारा!
हम सब से थोडा थोडा बल
ले कर आया हत्यारा!
सुविधा के चेरे, मृत्युमुखी,
हम अधोपथगामी है!
हम अल्पबुद्धि हैं,
अश्रद्धालु प्राणी हैं!

बम्बई ६-२-१९४८

दीन-हीन

हम दीन-हीन भी,
अहम्मन्य अभिमानी !
मन में अपने प्रति मोह, और
अपनों के प्रति मनमानी

मानव संज्ञा, पशुवृत्ति-निरत
हम ऊर्ध्वगमन के प्रति निष्क्रिय !
कण भर प्रकाश हमको असह्य,
है मन भर अंधकार ही प्रिय !
हैं दृढ़ विकार ; जड़ अहंकार
चञ्चल विचार व्रत वाणी

उद्धार-हेतु अवतरित हुई
धरती पर गंगा पुण्यधार,
धर मनुज रूप प्रभु परमधाम
आये हैं अब तक कई बार ;
अब तक मानव मानव न बने
हम-अविवेकी अज्ञानी !

कब तक प्रकाश से तम का यों
आमरण विषमतम रण होगा ?

कब तक यह मर्त्यलोक-वासी
यो आत्महनन कारण होगा ?
कब समझेंगे हम, नियति-प्रकृति से
हमे मुक्ति है पानी ?
हम दीन-हीन भी,
अहम्मन्य अभिमानी !

बम्बई ६-२-१९४८

श्रद्धा-कमल

पछतावा ही पछतावा है,
अन्तःकरण जल रहा है!

काया धारण की भारत ने,
बापू! जब अवतीर्ण हुए तुम!
देह देश की की विदीर्ण जब
देह रूप में शीर्ण हुए तुम!
पाप किया हमने, तुमने
अभिशाप शमित कर दिया नियति का,
पर कितना कठोर निष्ठुर यह
रूप दिखा निर्मम परिणति का!
अन्तर्दाह बढ़ रहा है
कुलिश-कठोर गल रहा है!

भारत को खंडित करने वाले
दैत्यों के वज्र गलेंगे!
सिन्धु और गंगा के धारे
दूर गये हैं, आन मिलेंगे!

खंड खंड होकर शरीर वह
भारत को अखंड कर देगा,
वह भीषण बलिदान तुम्हारा
इस विभीषिका को हर लेगा!
आज राष्ट्र के आंसू-जल में
श्रद्धा-कमल पल रहा है!

बम्बई
७-२-१९४८

देन

स्वर्ग और पृथ्वी के
बीचों-बीच,
ज्योतिरेख असिधारापथ
की खींच,
त्याग उभय लोकों के
वैभव भोग्य,
बना गये जीवन को
जीने योग्य!

बम्बई ७-२-१९४८

हेतु

कर देवार्पण
सब धर्म कर्म निष्काम
हो गए राममय,
ले विराम कह राम!
हे राष्ट्रदेवता
कर निज को बलिदान,
टाले तुमने
कितने अनिष्ट अनजान
क्या प्रकृति चाहती
थी मानव का रक्त
हुत हुए, देव
तुम जन जन पर अनुरक्त
होगा ही निश्चय
हिंसा का परिहार,
होता न अन्यथा
तुम पर हिंस्र प्रहार

बम्बई ७-२-१९४८

कबीर वाणी

हिन्दुअन की हिन्दुआई देखी
तुरकन की तुरकाई !
सदियों रहे साथ, पर दोनों
पानी तेल सरीखे ;
हम दोनों को एक दूसरे के
दुर्गुन ही दीखे !
घर-घर नगर-नगर में हमने
निर्दय अगन जलाई !
हम दोनों के नाम अलग
पर काम एक से, भाई !
यहाँ नाम का धरम, फिरी है
जिसके नाम दुहाई !
देवपुरुष की दुष्कर हत्या
हमने कर दिखलाई !

बम्बई
७-२-१९४८

खंड-संयुक्त

देश का विच्छेद ही
अभिशाप था
पर पितामह पर
न इसका पाप था
देश क्षत-विक्षत हुआ
वे शेष थे;
थे प्रतीक अखंड
देश अशेष के!

आज सीमा तोड़
वह उन्मुक्त है
उन्हीं में दो खंड
फिर संयुक्त है!

बम्बई ७-२-१९४८

गीता

जीवन भर कठिन परीक्षा में
जीवन बीता !
होकर के सदा पराजित
तुमने जग जीता
बलि देकर अपनी, बन विदेह
तुम बने जनक,
सीता स्वरूप साकार हुई
भग्वत्-गीता !

बम्बई — १०-२-१९४८

नंगा फ़कीर

वाणी ओजस्वमयी
वीर कवि कबीर की,
काव्य-सृष्टि तुलसी की
सुरसरि क नीर-सी,
अकबर का तंत्र
लोकमान्य का स्वराज्य मंत्र,
परिणति की प्रतिमा यह
नंगा फ़कीर थी !

बम्बई ११-२-१९४८

राम

कोटि-चरण, कोटि-बाहु
कोटि-नयन जनता !
तुमने ही पहचानी
जनता की क्षमता
जनपद दसनाय सतत
विचरे बहुजन हिताय
वही राम जो कि अखिल
राष्ट्र बीच रमता

बम्बई १२-२-१९४८

उपकार

दिया यह दिग्गज देश उबार,
क्षितिज के खोल दिए दिग्द्वार!

युगों तक रुद्ध और अस्वस्थ
रहा भारत विशाल अश्वत्थ!
जड़ों को सींच, किया चैतन्य
बने तुम संजीवन-पर्यजन्य!

वेद से ले संचरण-स्वभाव,
भूमि के जन के प्रति अपनाव,
लिया उपनिषद-सुविज्ञ विवेक
और गीता से तप की टेक,
जन्म ले धन्य किया संसार!

दिया यह दिग्गज देश उबार,
क्षितिज के खोल दिए दिग्द्वार!

बम्बई
१२-२-१९

अस्थिविसर्जन

भस्मशेष ! आज तुम
अशेष बन गए !
तन से भी अखिल
राष्ट्र देश बन गये !

सीमायें लांघ, पुन.
होकर ब्रह्माण्ड-लीन,
कहां—सत्य वेद-विदित
आस्थायें युगयुगीन !

महामौन धाम,
चित्तवेश बन गये !

शान्ति-क्रान्ति प्रलयंकर
तुम ही थे शिवशंकर,
बन कर अवतरित हुए
रामभक्त रामेश्वर !
पुनः गरलपान कर
महेश बन गये !

बम्बई

१२-२-१९४८

निश्चित

जीवन-प्रसून हरि के चरणों में
कर अर्पित,
कांटे ही कांटे मिलते हैं
जीवन में नित!
है जितनी जिसकी भक्ति और
सामर्थ्य-शक्ति;
उतनी ही कठिन आत्मबलि भी
देनी निश्चित!

बम्बई
२२-२-१९४८

प्रत्यक्ष

कर गये तुम सूक्ष्म सत्यों को
पुनः प्रत्यक्ष !
बिठाया फिर मृत्तिका को
अमृत के समकक्ष !

मर्त्यदेही चेतना थी संकुचित
भयभीत,
धराशायी थे युगों से
वेद मां के गीत,
ऊर्ध्वगामी अग्नि के टूटे हुए
थे पक्ष !
कर गये तुम सूक्ष्म सत्यों को
पुनः प्रत्यक्ष !

लड़े तुम पाखंड से, अन्याय से
दिनरात !
भूमि से आकाश तक तुम छा गए,
कृशतागात !

केवल तुम

हिन्दू दर्शन के सागर में
किसके पांव नहीं उखड़े है ?
नियतिवाद परलोकवाद के बीच
तुम्हीं स्थितप्रज्ञ रह सके !

दुर्बल दलित जाति में पल कर
कौन रह सका मानव-प्रेमी ?
अक्षुण्ण रख विश्वास, सत्यव्रत
तुम हँस हँस आघात सह सके !

दव कर ईश्वर की सत्ता से
मानव बन कर कौन उठ सका ?
उठ कर भी तुम गिरे हुओं को
अपना चिर अभीष्ट कह सके !

गये न गिरि, वन, गुहाक्रोड़ में,
राम मिले तुमको करोड़ में !
जन जन की ज्वाला अपना कर
शीतरश्मि के सदृश दह सके !

पूना
६२

मुक्ति

कर सके न जो शरीर धर कर,
किया अब वह अशरीर बन कर,
प्रवृत्ति हरि-चरण में समाहित,
मिली मुक्ति यों निवृत्ति-पथ पर !

मुक्ति होती है नयन-भासित,
न जब जीव कर्म-बंधनाश्रित !
प्रकृति की नियति की न देन है वह,
मुक्ति मिलती है बस अयाचित !

चले भक्ति-कर्म-ज्ञान-पथ पर,
निजत्व तज प्राप्त किया ईश्वर !
दृष्टि राममयी सर्वव्यापी,
मिली मुक्ति प्रत्येक पग पर !

बम्बई
१५-३-१९४८

केवल तुम

हिन्दू दर्शन के सागर में
किसके पांव नहीं उखड़े है ?
नियतिवाद परलोकवाद के बीच
तुम्हीं स्थितप्रज्ञ रह सके !

दुर्बल दलित जाति में पल कर
कौन रह सका मानव-प्रेमी ?
अक्षुण्ण रख विश्वास, सत्यव्रत
तुम हँस हँस आघात सह सके !

दब कर ईश्वर की सत्ता से
मानव बन कर कौन उठ सका ?
उठ कर भी तुम गिरे हुओं को
अपना चिर अभीष्ट कह सके !

गये न गिरि, वन, गुहाक्रोड़ में,
राम मिले तुमको करोड़ में !
जन जन की ज्वाला अपना कर
शीतरश्मि के सदृश दह सके !

पूना
२५-२-१९४८

मुक्ति

कर सके न जो शरीर धर कर,
किया अब वह अशरीर बन कर,
प्रवृत्ति हरि-चरण में समाहित,
मिली मुक्ति यों निवृत्ति-पथ पर !

मुक्ति होती है नयन-भासित,
न जब जीव कर्म-बंधनाश्रित !
प्रकृति की नियति की न देन है वह,
मुक्ति मिलती है बस अयाचित !

चले भक्ति-कर्म-ज्ञान-पथ पर,
निजत्व तज प्राप्त किया ईश्वर !
दृष्टि राममयी सर्वव्यापी,
मिली मुक्ति प्रत्येक पग पर !

बम्बई

१५-३-१९४८

मानव तुम !

तुम मानव बन कर मरे,
जिये जन्मे, बापू ;
डग डग पर नग बाधाओं के
लांघे अगणित !
पुरुषार्थ मानवी लिया साथ,
मानव की दुर्बलतायें भी,
मानवी मुक्तिहित बंधन भी
निज मानव पर बांधे अगणित !

हम तुम्हें देव कह कर, मानव का
मूल्य करेंगे कम न कभी !
है काम अधूरा पूरा करना,
मानव लेंगे दम न अभी !
स्वर्गत कह कर, स्वर्गीय मान, पाषाण पूज,
दायित्व न लें ?
तुम मानव थे, इसलिये मनुज वह करें,
सफल जो श्रम न अभी !

बम्बई १५-३-१९४८

सम्प्रति संदेश

बंधन मत मान नियति का
बंधन मत मान प्रकृति का,
बन जागरूक पुरुषार्थी;
संदेश यही सम्प्रति का!

'जो हुआ, वही है होना!'
यह खरा नहीं है सोना,
शोभा है दुर्बलचित की,
भूषण न मानवी मति का!

सब ह्रास-विकास मनुजगत,
आधारित जहां असद-सत!
मानव ही बना विधाता,
मानव की प्रगति-अगति का!

गांधी जी और गोडसे
उपजे मानवी कोख से!
है व्यर्थ बहाना, मानव,
लीलाधर त्रिभुवनपति का!

बम्बई
१५-३-१९४८

अलिखित गीत

तुंग हिमाद्रि समान
आज दिक्काल-परिधि के पार,
शोभित हो तुम वहां
जहां पहुंचे न शब्द-झंकार !
अपने अलिखित गीत
अनाघृत पुष्पों-से इस हेतु
अर्पित करता हूं
अञ्जलि दे सादर वारम्वार !
लिखित गीत में नहीं
अलख के गुन गाने की शक्ति;
प्रकट हुई, तो हुई
संकुचित अन्तरतम की भक्ति !
जो अबंध है उसे
छंद के प्रति कैसी अनुरक्ति ?
अलिखित स्वरलिपि की
झंकृति ही करो, देव, स्वीकार !

बम्बई
१६-३-१९४८

मानव के प्रति

मानव ही उत्तरदायी है
मानव के प्रति !
मानव की दुर्बलतायें ही
बलवती नियति !
स्वेच्छा को देवेच्छा कहना,
यह नही मुक्ति,
यदि बने स्वावलम्बी मानव
तो मिटे अगति !

हम कृती, हमारी सुकृति
और दुष्कृति अनेक !
हम देव-दैत्य, अज्ञान शक्ति,
विकसित विवेक !
हम कंस-कृष्ण, गोडशे-गांधी
रावण-रघुपति ;
मानव-मस्तक पर पाप-पुण्य
की युगल रेख !

मानव को मानस-मुकुर
देखना ही होगा,
अब तक निजत्व से आंख मूद
सब कुछ भोगा !
स्रष्टा का छोड़ बहाना,
द्रष्टा बनना है ;
यह मान लिया, तो लिया
बलाओं से लोहा !

हैं देव न दानव, मानव
निपट अकेला है !
वह स्वप्न कल्पना से
जगती पर खेला है !
क्या उसे कहानी नानी की
जानी न भूल ?
विज्ञान-ज्ञान का मानसतल
पर मेला है !

विधि का विधान जग में प्रधान
नाहक प्रसिद्ध !

मानव करता हरता अपना,
यह हुआ सिद्ध !
विधि की आज्ञा से नहीं
मनुज की गोली से,
मर्यादापुरुषोत्तम बापू जी
हुए विद्ध !

पूना २०-३-१९४८

सीख

करनी हमको ईश्वर-पूजा
मानव के सजग आचरण से ;
निर्मित करना जीवन-मन्दिर,
कर अनुप्राणित मन इस प्रण से ?
है यही योग, सादृश्य दिखे
भव में परमेश्वर निराकार ;
अवतार ग्रहण कर नारायण
कहते रहते यह जनगण से !

सूर्य अस्तमित !

खंड हिन्द का अखंड सूर्य
अस्तमित !
क्यों महात्म-तत्व यों अनात्म से
विजित ?
युग-विहान में विधान
अस्तमान का ?
क्या विचित्र तर्क विधि-विधान
में निहित ?

बम्बई २१-३-१९४८

आज़ाद हुए !

हम अपने पांवों हुए खड़े ;
कर बाधाओं को पार, बढ़े !
साग्रह सत्यों के लिए लड़े
सविनय अन्याय-विरुद्ध अड़े !
तोड़े सदियों के पाश सड़े,
पोंहचों पर पहने लौह कड़े,
आज़ाद हुए, आज़ाद हुए
उससे भी जिसने किये बड़े !

पूना
२२-३-१९४८

क्यों !

विधि का विधान कह कर, अपना
आचरण मनुज क्यों जाय भूल ?
क्यों ईश्वर का अवलम्ब
ग्रहण कर, अपने लिए उगाय शूल ?
हो आदि-अन्त अज्ञात, ज्ञात
है किन्तु अधर्मी वर्तमान;
शुभ-अशुभ मनुज के कर्मों की
मानव के मन में जमी मूल !

बम्बई
२२-३-१९४८

शिरस्त्राण

भारत का शिरस्त्राण भूलुंठित !
शिरोधार्य वरदहस्त पदमर्दित !

घूम रहा दुर्विनीत वक्री
विपरीत चक्र !
आर्यभूमि भारत का दुर्गति
यह प्रगति वक्र !
ऊर्ध्वमूल अक्षयवट नाशग्रथित !

भ्रान्ति और विभ्रम का आशय
यह उर उदार,
अभी नहीं समझ सका
निष्ठुर वह चमत्कार !
बापू की हत्या में मर्म निहित ?

जरा-मरण, भिन्न बुद्धि,
अहंकार शाश्वत हैं ;
यह अनात्म है, महात्म-तत्व हेतु
घातक है !
मानवता राग-द्वेष-क्लेश-विजित !

बम्बई ३-६-१९४८

पुष्पक विमान

जन-मन के कोटिदल कमल पर
विराजमान !
अन्तर्लोचन समान, सहज नहीं
भासमान !
ज्योति चिर सनातन, किन्तु दृष्टि के
नवीन दीप ;
पृथ्वी की आशा के सोज्ज्वल
पुष्पक विमान !

पूना
१३-७-१९४८